शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 मार्च 2014

डॉ.धर्मवीर के दलित विमर्श में कबीर-काव्य का मूल्यांकन

सुश्री प्रेमवती
गुरु गोविन्द सिंह कॉलेज ऑफ़ कॉमर्स
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

शोध संक्षेप

भक्ति काल में कबीर अपने व्यक्तित्व और सामाजिक विचारधारा की वजह से अलग पहचाने जाते हैं। यही वजह है कि कबीर 'हिन्दी आलोचना' और 'प्रगतिशील आलोचना' के केन्द्र में मूल्यांकित होते रहे हैं। आज समकालीन आलोचना के रूप में कबीर 'दलित-विमर्श' के केन्द्र में है। डॉ धर्मवीर ने आजीवन 'कबीर' के संदर्भ में शोध कार्य किया। दलित-आलोचनात्मक दृष्टि से किया गया एक नवीन मूल्यांकन है। जो कबीर को समझने की एक नई दलित-दृष्टि प्रदान करता है। इस नवीन दलित-दृष्टि के आलोक में हमें 'कबीर-काव्य' को भी समझना चाहिए।

प्रस्तावना

स्वाधीनता संग्राम में दलितों और स्त्रियों ने भी अपने अधिकारों के लिए लड़ाई लड़ी। मध्यकाल में भक्ति आन्दोलन के द्वारा धार्मिक स्वतन्त्रता तो निम्न-वर्ग को मिली पर सामाजिक समता नहीं मिली। देश आजाद हुआ, चारों तरफ खुशी की लहर थी कि समाज बदलेगा और सबको समान रूप से उन्नति का सुअवसर मिलेगा, परन्तु ऐसा नहीं हुआ। दलितों को संविधान में आरक्षण तो मिला। लेकिन समाज में जाति के आधार पर वही पहले जैसा भेदभाव रहा। 'राष्ट्रवाद' की परिभाषा में दलित कहीं नहीं था। ये अहसास उसे देश के आजाद होने के बाद हुआ। 'स्वराज' की प्राप्ति के लिए एक 'राष्ट्रवाद' का निर्माण हुआ। तमाम अन्तर्विरोध के रहते हुए भी सभी लोगों ने 'एक राष्ट्रवादी' होने का नारा दिया। जो देश की अस्मिता का प्रतीक था। लेकिन देश की आजादी के बाद ही राष्ट्रवाद का आन्तरिक मूल्य बिखरने लगा। अगर ऐसा नही होता तो भारत-पाक का बँटवारा, गांधी की हत्या इत्यादि क्यों होती? 'राष्ट्रवाद' भाव बिखरने लगा। दलित-अस्मिता, स्त्री-अस्मिता, और सबाल्टर्न वर्ग इत्यादि ने देखा कि वह' राष्ट्रवाद' के भीतर अपने-आप को नहीं पाते। वहीं से दलित, स्त्री, आदिवसी और अल्पसंख्यक अपनी-अपनी अस्मिता की तलाश में अपना रास्ता बनाते हैं। तमाम सारी रचनाओं को दलित आलोचक यह कह कर खारिज करते है कि उसमें वह है ही नहीं और अगर वह हैं तो उनका चित्रण ठीक प्रकार से नही हुआ है।

डॉ.धर्मवीर दलित-साहित्य की परिभाषा करते हुए लिखते हैः-"दलित-साहित्य वह है जिसे दलित लेखक लिखता है। वह श्रेष्ठ साहित्य लिख सकता है लेकिन शर्त यह है कि गैर-दलित लेखक कैसा भी दलित-साहित्य नहीं लिख सकता। दलित साहित्य के मूल्यांकन की मनाही नहीं है, समीक्षक यह निर्णय दे सकता है कि कौन-सी रचना दलित-साहित्य की श्रेष्ठ रचना है, लेकिन यह

अनुमति नही दी जा सकती कि किसी गैर दलित लेखक की रचना को दलित साहित्य की रचना मान लिया जाए।''

यहीं पर डॉ.धर्मवीर को वह 'ब्राह्मणवादी' दृष्टि का पता चलता है। जो हिन्दी साहित्य का इतिहास' में शुरू से अन्त तक व्याप्त है। यही 'ब्राह्मणवादी' दृष्टि 'तुलसी' को श्रेष्ठ और 'कबीर' को फुटकर बही खाते में ले जाती है। डॉ.धर्मवीर 'हिन्दी आलोचना' से लेकर जनवादी का नारा लगाने वाली 'प्रगतिशील आलोचकों की 'कबीर' संबंधी आलोचना को यह कहकर खारिज कर देते हैं कि इन सभी ने 'ब्राह्मणवादी' नजरिए से कबीर का मूल्यांकन किया है। आचार्य शुक्ल ने अपने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में कबीर को उच्च स्थान नहीं दिया। लेकिन आश्यर्य तब होता है, जब डॉ.धर्मवीर 'कबीर' पुस्तक के लेखक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी को भी अपने सवालों के घेरे में ले लेते हैं। यही कारण है कि नामवर सिंह, मैनेजर पाण्डेय और डॉ.सुधा सिंह जैसे मार्क्सवादी आलोचक 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' के पुनर्लेखन की बात करते हैं। जिसमें दलित साहित्य और स्त्री साहित्य को भी मुख्य धारा में शामिल किया जाए।

आचार्य शुक्ल ने कबीर-भाषा की मौलिकता को नकारा, उन्हें 'लोक-विरोधी' और 'विदेशी परम्परा का अनुयायी' तक कह डाला। वहीं दूसरी तरफ आचार्य द्विवेदी ने उनके पदों को फ़ोकट का माल' और 'बाई-प्रोडक्ट' तक कहा। वह कबीर को समाज-सुधारक न मानकर एक व्यक्तिगत साधना के प्रचारक मानते हैं। इन्हीं बातों का आलोचनात्मक विकास आगे की कबीर-संबंधी आलोचना में दिखाई देता है। इसलिए डॉ.धर्मवीर 'कबीर-संबंध'में हुए सारे कार्य को ही खारिज कर देते हैं। आचार्य शुक्ल से पूर्व 'गार्सा द तासी' का 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में कबीर के समाज-सुधारक होने की बात कही गई है। साथ ही भाषा संबंधी उनकी अकृत्रिमता की भी भूरि-भूरि प्रशंसा की है। लेकिन कबीर की इस आलोचना (गार्सा द तासी) का विकास न आचार्य शुक्ल के इतिहास में दिखाई देता है और न 'कबीर' को स्थापित करने वाले आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की आलोचना में। इस संबंध में आचार्य शुक्ल का इतिहास जार्ज अब्राहम ग्रियर्सन के इतिहास से ज्यादा मेल खाता है। लगभग 40 वर्षों तक जार्ज ग्रियर्सन ने 'तुलसीदास' को ही स्थापित किया है। इस भेदभाव की दृष्टि ने ही डॉ धर्मवीर को 'निर्गुण संत काव्य' विशेष रूप से 'कबीर के मूल्यांकन को 'दलितवादी दृष्टिकोण से देखने समझने की ओर प्रेरित किया। कबीर के मूल्यांकन संबंधी डॉ.धर्मवीर की चार पुस्तकें है 1. 'कबीर के आलोचक' से लेकर 2. कबीर डॉ.हजारी प्रसाद द्विवेदी का प्रक्षिप्त चिंतन 3. कबीर और रामानन्दः किंवदंतियां., 4. कबीरः बाज भी, कपोत भी, पपीहा भी। इन पुस्तकों में डॉ.धर्मवीर ने कबीर का मूल्यांकन बड़ा ही तार्किक और बुद्धिमानी से हर-प्रश्न का उत्तर पूरे ब्यौरे और तर्कपूर्ण ढंग से दिया है।

इसमें उन्होंने कबीर के जन्म से संबंधित बातों, कबीर के गुरु रामानन्द और कबीर द्वारा नया पंथ बनाए जाने से संबंधित बातों का मूल्यांकन किया है। सबसे पहले वह 'कबीर' के गुरू रामानन्द होने की बात को अस्वीकार करते हैं। उनके अनुसार 'रामानन्द को कबीर का गुरु बताने में इतिहास के साथ साजिश हुई है।' उनके अनुसार कबीर की रचनाओं के आधार पर उनके गुरू 'बुद्धि' और 'विवेक' ही हो सकते हैं। कोई

ब्राह्मण रामानन्द नहीं। उन्होंने तो स्वयं ब्राह्मणों की जमकर आलोचना की है। कबीर को किसी विधवा ब्राह्मणी का पुत्र होने वाली बात को भी वह नहीं स्वीकारते, साथ ही वह आचार्य द्विवेदी द्वारा कबीर को हिन्दू और वैष्णव सिद्ध कर उन्हें समाज सुधारक की अपेक्षा व्यक्तिगत स्तर पर साधक बतलाने वाली विचारधारा का भी खण्डन करते हैं। इस संबंध में उन्होंने लिखा है- ''डॉ द्विवेदी ने कबीर के प्राण तब खींच निकाले हैं, जब उन्होंने कबीर को भक्त कहा है। कबीर को भक्त कहने में भी कुछ ज्यादा मुश्किल न होती, लेकिन उन्होंने कबीर को समाज सुधार के विरोध में और उससे भिन्नता दिखाते हुए कबीर को 'भक्त' कहा जाता है।' बाद में साहित्य और आलोचना के क्षेत्र में 'दलित-दृष्टि' का स्वागत भी हुआ। इस आधार पर फिर से सम्पूर्ण आलोचनात्मक कार्य कर पुनर्मूल्यांकन होना चाहिए। सुधीश पचौरी आलोचना के क्षेत्र में 'दलित-दृष्टि' का स्वागत करते हुए लिखते हैं, ''वह बराबर चौके में नहीं आ सकता। वह बराबर की कुर्सी में नहीं बैठ सकता..(लेकिन) धर्मवीर ने साहित्य के मंदिर में जूतों सहित प्रवेश कर लिया है। हाय-हाय है, यह हाय-हाय बताती है कि एक झटके में धर्मवीर ने वर्णवादियों को उनके सत्ता विमर्श के साथ पकड़ लिया है।''

वास्तव में डॉ.धर्मवीर की लड़ाई दलितों के अपने इतिहास, चिंतन-परम्परा, और धर्म की है। अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', डॉ.पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ.राम कुमार वर्मा और प्रो. साही कई ऐसे विद्वान हैं जो यह मानते हैं कि कबीर एक नया पंथ, नए सम्प्रदाय की इच्छा रखते थे। डॉ.धर्मवीर ने उस नये पंथ को 'दलित-धर्म' की संज्ञा दी। इस संबंध में डॉ.धर्मवीर ने लिखा- ''कबीर का धर्म हिन्दू धर्म और मुसलमान धर्म से सर्वथा अलग धर्म है। यह दलित धर्म है। इसे इसी रूप में समझा जाए और इतिहास भर में इसकी स्पष्ट पहचान पर धूल न फेंकी जाए।..कबीर ने दलित धर्म की लम्बी, परम्परा को पहचाना और अभिव्यक्ति दी है, जो ब्राह्मण धर्म समेत संसार के किसी भी अन्य धर्म से भिन्न है।''

डॉ धर्मवीर द्वारा कबीर के संदर्भ में किया गया कार्य बहुत महत्वपूर्ण है। वह कबीर को रहस्यावाद, योगमार्ग, व्यक्तिगत साधना से निकाल उनका समाज-सुधारक रूप को दलित चिंतकों की परम्परा से जोड़ते हुए नज़र आते हैं। लेकिन उनके मूल्यांकन की भी कुछ सीमाएँ हैं, जिसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। इस संबंध में स्वयं दलित चिंतक सूरज प्रकाश बड़त्या ने लिखा है- ''डॉ.धर्मवीर ने भी पूरी बहस को 'धर्मांतरण' के रूप में एक समानांतर ढांचा देकर पूरे मुक्ति के विमर्श को ही दूसरी दिशा में मोड़ दिया। कबीर न किसी धर्म के प्रस्तावक हैं, न दलित को किसी धर्म की आवश्यकता है और न किसी मध्ययुगीन ढाँचे की। कबीर दलितों की प्रतिरोधी परम्परा के एक ऐसे पूर्वज हैं, ऐसे सेनानायक हैं जिन्हें धर्म की आवश्यकता नहीं थी।''

सन्दर्भ

1 डॉ.धर्मवीर, 'दलित-साहित्य की परिभाषा समग्रता और पूर्णता की ओर'- दलित-साहित्य, 1994, पृ. 39

2 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, जायसी ग्रन्थावली (भूमिका से), पृ. 66-67.

3 आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर पृ. 220.

4 आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर (उपसंहार से), पृ. 218.

5 डॉ धर्मवीर, कबीर के आलोचक, पृ. 85

6 प्रो. सुधीश पचौरी, कबीर: धर्मवीर और फूको की जीनियोलोजी, बहुवचन-अंक-7, पृ. 246

7 डॉ.धर्मवीर, कबीर:बाज भी, कपोत भी, पपीहा भी, भूमिका से, पृ.

8 डॉ.तेज सिंह सं., सबद बिवेकी कबीर, पृ. 173